जर्मनी के इस प्राचीन किले में भी सुरक्षित है आयुर्वेद की गौरवगाथा

धनतेरस और 'राष्ट्रीय आयुर्वेद दिवस' के अवसर पर

हाईडलबर्ग जर्मनी का एक छोटा सा शहर है. इसकी जनसंख्या केवल डेढ़ लाख है. परन्तु यह शहर जर्मनी में वहां की शिक्षा पद्धति के 'मायके' के रूप में प्रसिद्ध है, क्योंकि यूरोप का पहला विश्वविद्यालय सन १३८६ में इसी शहर में प्रारम्भ हुआ था.

इस हाईडलबर्ग शहर के पास ही एक छोटी सी पहाड़ी पर एक किला बना हुआ है. इस किले को 'हाईडलबर्ग कासल' अथवा 'श्लोस' के नाम से भी जाना जाता है (जर्मनी में किलों को 'कासल' अथवा 'श्लोस' कहा जाता है). तेरहवीं शताब्दी में निर्माण किया गया यह किला आज भी व्यवस्थित रूप बनाएं रखा है. इसीलिए यह किला पर्यटकों के आकर्षण का विशेष केन्द्र है. इस किले के एक भाग में अत्यंत सुन्दर संग्रहालय है, जिसका नाम 'अपोथीकरी म्यूजियम' (औषधियों का संग्रहालय) है. इस संग्रहालय में जर्मन प्रशासन ने बेहद कलात्मक पद्धति से, सुन्दर सजावट के साथ विभिन्न खूबसूरत जारों एवं बोतलों में मॉडल रखकर विभिन्न यंत्रों द्वारा औषधि निर्माण का पूरा इतिहास सजीव स्वरूप में पर्यटकों के सामने रखा है. जर्मनी में औषधियों का यह इतिहास केवल आठ-नौ सौ वर्षों का ही है. परन्तु उनके अनुसार विश्व के औषधिशास्त्र में जर्मनी ही अग्रणी है. इसी संग्रहालय में थोड़ी-बहुत लोकलाज एवं शर्म के कारण भारत का भी उल्लेख किया गया है. वह भी इस प्रकार कि, 'वास्कोडिगामा द्वारा भारत पहुँचने के बाद यूरोप को भारत की जड़ी-बूटियों वाली औषधियों की पहचान हुई'.

कुछ दिनों पहले मैं हाईडलबर्ग के इस किले में स्थित इस औषधि संग्रहालय को देखने गया था. उस समय वहां पास ही के किसी स्कूल के बच्चे भी आए हुए थे. वे जर्मन बच्चे संभवत: चौथी-पाँचवीं में पढ़ने वाले होंगे, जो उस संग्रहालय में इधर-उधर घूम रहे थे, हंसी-मजाक और हल्ला-गुल्ला करने में लगे थे. वे आपस में जोर-जोर से चर्चा भी कर रहे थे. मजे की बात यह कि उनमें से प्रत्येक बच्चे के हाथ में एक कागज़ था और वे बच्चे उस कागज़ पर लगातार बीच-बीच में कुछ लिख रहे थे. जानकारी लेने पर पता चला कि इस संग्रहालय की यह यात्रा उनके शैक्षणिक पाठयक्रम का एक हिस्सा है और उन बच्चों को उनकी संग्रहालय की इस यात्रा के बारे नोट्स बनाने हैं. इन्हीं नोट्स के आधार पर उनकी यूनिट टेस्ट होनी हैं .

सच कहूं तो मेरे ह्रदय में एक धक्का सा लगा... क्या अपने देश में ऐसा संभव है ? जर्मनी के स्कूल के वे बच्चे उस संग्रहालय से क्या विचार लेकर बाहर निकलेंगे ? यही नं, कि विश्व में औषधियों / चिकित्सा शास्त्र के क्षेत्र में जर्मनी सबसे आगे था और है. _(यह अलग बात हैं की केवल एक हजार वर्ष का ही उनका इस विषय का इतिहास हैं.)_ भारत का औषधि ज्ञान तो कभी उनकी गिनती और कल्पना में भी नहीं आएगा.

और हम लोग वैचारिक रूप से इतने दरिद्री हैं कि तीन हजार वर्षों का चिकित्साशास्त्र एवं औषधि विज्ञान का चमचमाता इतिहास होने के बावजूद, अपनी तमाम पीढ़ियों को उसका सच्चा दर्शन तक नहीं करवा सके हैं.

*जब सारी दुनिया को चिकित्सा, मेडिसिन, अपोथीके, फार्मेसी जैसे शब्दों की जानकारी नहीं थी, उस कालखंड में, अर्थात ईसा पूर्व सात सौ वर्ष पहले, विश्व के पहले विश्वविद्यालय (अर्थात तक्षशिला) में चिकित्साशास्त्र नाम का एक व्यवस्थित विभाग और पाठ्यक्रम मौजूद था. ईसा से ६०० वर्ष पहले सुश्रुत ने 'सुश्रुत संहिता' नामक चिकित्साशास्त्र पर आधारित एक पूर्ण ग्रंथ लिखा था. ऋषि सुश्रुत विश्व के पहले ज्ञात 'शल्य चिकित्सक (सर्जन)' हैं. अपनी शल्य चिकित्सा के लिए वे १२५ प्रकार के उपकरणों का उपयोग करते थे. इन सभी उपकरणों की सूची भी उन्होंने अपने ग्रंथ में लिखी है. सुश्रुत ने ३०० प्रकार की भिन्न-भिन्न 'शल्य चिकित्सा' (ऑपरेशन)' किए जाने के बारे में विस्तार से लिखा है. यहां तक की मोतियाबिंद की शल्यक्रिया का वर्णन भी उन्होंने विस्तृत लिख रखा है. सनद रहे कि यह सब लगभग

पौने तीन हजार वर्षों पहले की बात है, जब यूरोप सहित समूचे विश्व को चिकित्सा के शब्द तक नहीं पता थे.*

वर्तमान विद्यार्थियों की बात छोड़ दें, तब भी आज की जानकार पिछली पीढ़ी को भी क्या इन बातों की जानकारी है.. ?

सामान्यत: चिकित्साशास्त्र की प्राचीनता के बारे में तीन प्रकार की प्रणालियों के सन्दर्भों पर विचार किया जाता है. १) भारतीय चिकित्सा पद्धति – मुख्यत: आयुर्वेद... २) इजिप्शियन प्रणाली... और ३) ग्रीक अर्थात यूनानी चिकित्सा पध्दति.

इनमें से इजिप्शियन प्रणाली में 'पिरामिड' के अंदर शवों को 'ममी' के रूप में वर्षों तक सुरक्षित रखने का विज्ञान उन्हें पता था, इसलिए प्राचीन माना जाता है. इस प्रणाली में 'इमहोटेप' (Imhotep) यह व्यक्ति अनेक विषयों में पारंगत था, जिसे इजिप्शियन चिकित्सा प्रणाली का युगपुरुष माना जाता है. इसका कालक्रम ईसा पूर्व २७०० वर्ष पहले का, अर्थात आज से लगभग पौने पाँच हजार वर्ष पुराना माना जाता है. परन्तु वैज्ञानिक और शास्त्रीय तरीके से रोगों के निवारण एवं इसके लिए विभिन्न औषधियों की रचना करने का कोई उल्लेख उस कालखंड में नहीं मिलता. उस दौरान प्रमुखता से केवल बुरी आसुरी शक्तियों (भूतों इत्यादि) से बचाव के लिए कुछ औषधियाँ उपयोग करने पर ही बल दिया जाता था.

ग्रीक (यूनानी) चिकित्सा प्रणाली भी बहुत प्राचीन है. आज के चिकित्सक अपना व्यवसाय आरम्भ करने के पहले जिस 'हिप्पोक्रेट' के नाम से शपथ ग्रहण करते हैं, वह हिप्पोक्रेट ग्रीस का ही था. सुश्रुत के कालखंड से लगभग डेढ़ सौ वर्ष बाद का.

हिप्पोक्रेट के कालखंड में भारत में चिकित्साशास्त्र विकसित स्वरूप में उपयोग में आ चुका था. ईसा पूर्व सातवी और आठवीं शताब्दी में तक्षशिला विश्वविद्यालय में चिकित्साशास्त्र का पाठयक्रम पढ़ने के लिए अनेक देशों से विद्यार्थी आते थे. इसीलिए ऐसा कहा जाता है कि, हिप्पोक्रेट के अनेक लेखों में सुश्रुत संहिता का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है.

आगे चलकर ईसा मसीह के कालखंड में 'केलसस' (ulus Cornelius Celsus – ईसापूर्व २५ एवं ईस्वी सन ५० वर्ष) ने चिकित्साशास्त्र विषय पर 'डीमेडीसिना' नामक आठ भागों का बड़ा सा ग्रंथ लिखा. इसके सातवें भाग में कुछ शल्यक्रियाओं के बारे में जानकारी दी गई है. मजे की बात यह है कि इस ग्रंथ में वर्णित मोतियाबिंद के ऑपरेशन की जानकारी, इस ग्रंथ के ६०० वर्ष पहले सुश्रुत द्वारा लिखी 'सुश्रुत संहिता' में उल्लिखित मोतियाबिंद की शल्यक्रिया वाली जानकारी से हू-ब-हू मिलती-जुलती है.

मूलत: देखा जाए तो भारतीय आयुर्वेद का प्रारम्भ कहां से और कब हुआ, इसकी ठोस जानकारी काही भी नहीं मिलती. ऋग्वेद एवं अथर्ववेद में इसके उल्लेख मिलते हैं. अथर्ववेद में तो चिकित्साशास्त्र के सम्बन्ध में अनेक टिप्पणियाँ प्राप्त होती हैं. इसीलिए आयुर्वेद को अथर्ववेद का उप-वेद माना जाता है. अब विचार करें कि अथर्ववेद का निश्चित कालखंड कौन सा है.. ? यह बताना बहुत कठिन है. कोई कहता है ईसापूर्व १२०० वर्ष, जबकि कोई ईसापूर्व १८०० वर्ष.

इन ग्रंथों से ऐसा कभी प्रतीत ही नहीं होता कि इन ग्रंथों से ही 'आयुर्वेद' नामक औषधिशास्त्र नामक नया शोध किया गया हो. बल्कि ऐसा लगता है कि उस कालखंड में जो ज्ञान पहले से ही था, उसी को अथर्ववेद ग्रंथ में शब्दबद्ध किया जा रहा हो. इसका अर्थ यही है कि हमारी चिकित्सा पद्धति अति-प्राचीन है.

मूलतः आयुर्वेद अपने-आप में अत्यंत सुव्यवस्थित रूप से रचित चिकित्सा / आरोग्य शास्त्र है. चरक एवं सुश्रुत की महान परंपरा को उनके शिष्यों द्वारा निरंतर आगे ले जाया गया. आगे चलकर ईसा के बाद की की सातवीं शताब्दी में सिंध प्रांत के ब्राह्मणों ने सुश्रुत एवं कश्यप ऋषियों के विभिन्न ग्रंथों को एकत्रित करके उसके आधार पर एक नया ग्रंथ लिखा, जिसे 'अष्टांग ह्रदय' कहा जाता है. इस ग्रंथ में रोगों / विकारों पर और अधिक शोध करके आठवीं शताब्दी में वैद्य माधव ऋषि ने 'निदान ग्रंथ' की रचना की. इस ग्रंथ के ७९ भाग हैं, जिनमें रोग, उसके लक्षण एवं उसके आयुर्वेदिक उपचार के बारे में गहराई से विवेचन किया गया है. इस ग्रंथ के पश्चात 'भावप्रकाश', 'योग रत्नाकर' जैसे ग्रंथ लिखे गए. शारंगधर ने भी औषधियों के निर्माण की प्रक्रिया के बारे में काफी कुछ लिखा है. आगे चलकर ग्यारहवीं शताब्दी में जब मुस्लिम आक्रान्ताओं के आक्रमण शुरू हुए, तब भारत में भी आयुर्वेद की परंपरा क्षीण होती चली गई.

आज के आधुनिक विश्व में इजिप्शियन चिकित्सा पद्धति तो अस्तित्व में ही नहीं है. ग्रीक चिकित्सा पद्धति (यूनानी) थोड़ी-बहुत बची हुई है. परन्तु इसमें भी 'शुद्ध यूनानी' औषधियाँ कितनी हैं, यह एक बड़ा प्रश्न है. विश्व में आज की तारीख में एलोपैथी का बोलबाला है. यह एलोपैथी मात्र आठ सौ – नौ सौ वर्ष पहले से ही विकसित होना शुरू हुई है. जबकि होम्योपैथी तो बहुत-बहुत बाद में अर्थात सन १७९० में जर्मनी में प्रारंभ हुई है.

इस सम्पूर्ण पृष्ठभूमि के आधार पर कहा जा सकता है कि लगभग चार हजार वर्ष पुरानी और वर्तमान में समूचे विश्व में सर्वाधिक मांग रखने वाली 'आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति' यह अद्वितीय है. दुःख की बात यह है कि हम भारतीयों को ही उसकी कद्र नहीं है...!

(प्रशांत पोळ द्वारा लिखित 'भारतीय ज्ञान का खजाना' इस पुस्तक से साभार- लेखक ने भारत की प्राचीन गौरवशाली विरासतों और उनके महत्व को लेकर कई पुस्तकें लिखी है)